सद्भावना और ज्ञान रंग में रंगने का पर्व है होली

भारतीय संस्कृति की परम्परा में त्योहारों का बहुत महत्व है। हर एक त्योहारों के पीछे आत्मा और परमात्मा की अतीत में हुए उत्थान तथा पतन की जीवंत कहानी है। जिस प्रकार शरीर से आत्मा निकल जाने के बाद मुर्दा का कोई महत्व नहीं है, उसी प्रकार आध्यात्मिक रहस्यों के जाने बिना पर्व की सार्थकता नहीं है। जितना पर्व भारत में मनाये जाते है शायद ही उतना विश्व के किसी देश में मनाये जाते हैं। पर्वों का एक क्रम से आने के पीछे कोई न कोई रहस्य समाया होता है जो मनुष्य को आध्यात्मिक शक्ति प्रदान करते हैं। बदलते समय के चक्र में भौतिक दृष्टिकोण से सोचने के कारण हम पर्वों को केवल लौकिक रूप से मनाते हैं तथा अलौकिक स्तर तक नहीं सोचते हैं।

फाल्गुन मास की पूर्णिमा के अवसर पर मनाये जाने वाला इस पर्व पर होलिका जलाने तथा एक-दूसरे के साथ रंग में रंगने की प्रथा है। होलिका जलाना तथा स्थूल रंग में रंग कर स्वयं को रंग-बिरंगे कर लेना और फिर पुराने कपड़े उतार नये कपड़े पहन नि:स्वार्थ भाव से बिना भेदभाव के एक-दूसरे से गले मिलना अवश्य अलौकिक महत्ता को दर्शाती है।

भारतीय संस्कृति और शास्त्र पंडितों का मानना है कि यह त्योहार प्राचीनकाल से चला आ रहा है। इस अवसर पर लोग वेद के 'रक्षोहगं बलगहम्' आदि राक्षस विनाशक मन्त्रों से होलिका दहन किया करते थे। लोगों की इस मान्यता का रहस्य भी यही तो होता है कि हम राक्षसी आहार, आचार, व्यवहार आदि से अपनी रक्षा करें। उसी के निमित्त रंग खेलना गोया आत्मा को ज्ञान रंग या सत्संग के रंग में रंगना है और होलिका दहन हमें इस बात की याद दिलाता है कि पाप के ताप से जल मरता है, अत: हमें पाप नहीं करने चाहिए। रंग के कई रूप है- ज्ञान के रंग, संग का रंग आदि-आदि। इन रंगों के बारे में कबीर दास जी ने भी कई धारणायें बतायी हैं।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में मनुष्य तमोप्रधान होने के कारण आध्यात्मिक रहस्यों को दरकिनार कर पूर्ण भौतिक रूप से इस पर्व को मनाने लगा है। अब तो स्थूल रंग के साथ-साथ ऐसे रंगों का प्रयोग होने लगा है जिसमें मनुष्य के आंख में पड़ने या उसके चेहरे आदि लगने पर उसे छुड़ाने के लिए बहुत मशक्कत करनी पड़ती है। कइयों की तो आंख ही खराब हो जाती है। हुल्लड़बाजी, मिट्टी तथा गन्दे द्रव्यों का भी इस्तेमाल होने लगा है। गन्दे अपशब्द तक का इस्तेमाल करते समय कहते हैं कि 'बुरा न मानो होली है।'

भारतीय गणना के अनुसार, फाल्गुन में पूर्णिमा की रात्रि वर्ष के महीने के अंतिम मास में पड़ती है। इसका अर्थ है- कलियुग अर्थात् आसुरी युग का अंत तथा सतयुग अर्थात् दैवी युग के आरम्भ का समय है। होलिका जलाते समय निकृष्ट वस्तुओं यहाँ तक कि अपने शरीर पर उबटन लगाकर उसकी गन्दगी भी उस होलिका दहन में डालते हैं, का अर्थ है कि ऐसे समय पर हमें अपने पूर्व किये गये बुरे कर्मों तथा अपने अंदर छिपे बुराइयों, कीचड़ों को योगाग्नि अर्थात् परमात्मा की ज्वाला स्वरूप स्मृति से नष्ट कर दें।

वास्तव में, यह पर्व आत्मा और परमात्मा के संग ज्ञान रंग की होली खेलने का यादगार है। हमें होलिका दहन में अपने बुराइयों, ईर्ष्या, द्वेष, नफरत, अहंकार, वासना तथा आसुरी वृत्तियों जो स्वयं को तथा दूसरों को

भी प्रभावित करती है उसको स्वाहा कर देना चाहिए। अग्नि को ऋषि-महर्षियों ने योगाग्नि की भी संज्ञा दी है अर्थात् परमात्मा की याद एक ऐसी अग्नि है जिससे परमात्मा की याद में निरंतर तपने से आत्मा में सच्चा, शुद्ध दैवी गुणों का निखार आता है। इस योगाग्नि से पाप तो दग्ध होते ही हैं परन्तु आसुरी प्रवृत्तियां भी नष्ट हो जाती हैं। फिर दैवी गुणों के आगमन से जीवन में खुशियों का अपार संचार होता है। इस अग्नि में सभी मनुष्यात्माओं को तपना चाहिए क्योंकि यह होलिका दहन केवल एक के लिए नहीं है। इसलिए इस दहन पर सभी लोग बिना भेदभाव के मनाते हैं।

अब तक हम केवल विसंगतियों की, दूसरों के संग के रंग की, माया के रंग तथा केवल स्थूल रंगों की ही होली खेलते आये हैं जिससे होली की प्रासंगिकता ही समाप्त हो गयी है। होली का अर्थ अंग्रेजी के हिसाब से 'पवित्र' होता है। जब मनुष्य विविध प्रकार की बुराइयों, कुरीतियों, काम-क्रोधादि विकारों के वशीभूत होकर तथा स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से हानिकारक रंगों की होली खेलते-खेलते विकारों, साम्प्रदायिकता, भेदभाव, ईर्ष्या और नफरत के दलदल में फंस जाता है तब कल्याणकारी भोलेनाथ शिवबाबा इस पतित सृष्टि पर अवतरित होते हैं और जिन बुराइयों के प्रतीक नशे के लिए भांग आदि का इस्तेमाल किया जाता है उस अशुद्ध नशे को समाप्त कर नारायणी तथा ईश्वरीय नशे का ज्ञानामृत पान कराते हैं तथा सर्व मनुष्यात्माओं को ज्ञान की होली में रंगते हैं। हमें ज्ञान से परिपूर्ण होकर एक-दूसरे के ऊपर ऐसे ज्ञान का रंग लगाना चाहिए जिससे सर्व मनुष्यात्माओं के अन्दर वसुधैव कुटुम्बकम् और सद्भावना का साम्राज्य स्थापित हो सके।

परमात्मा इस सृष्टि पर हमें अमिट ज्ञान के रंग की होली खेलने के लिए भी भेजते हैं परन्तु भौतिक चकाचौंध तथा आत्म-विस्मृति के कारण हमें सच्चे रंग को छोड़ तन और मन को गर्त में धकेलने वाले रंगों को सहारा लेने लगते हैं। अब तो इस पर्व का इतना विकृत रूप हो गया है कि लोग इस दिन जुआ और शराब तथा मांस आदि का उपयोग करने लग पड़े हैं। इस पर्व के सन्दर्भ में लोगों की यह मान्यता है कि भोले शंकर परमात्मा खुद ही भांग आदि का सेवन करते हैं। परन्तु इसकी आध्यात्मिक व्याख्या के अनुसार, सृष्टि पर मानव जगत में व्याप्त बुराइयों के विष का पान करते हैं तथा ज्ञानामृत की वर्सा करते हैं। जिस रंग के बरसात में सर्व मनुष्यात्मायें ज्ञान-रंग से परिपूर्ण होकर देवतुल्य हो जाती हैं।

प्राय: देखा गया है कि होली के दिन आधा दिन रंग खेलने के बाद लोग स्नान आदि करके नये-नये कपड़े पहनते हैं फिर एक-दूसरे से गले मिलते हैं। खुशियां मनाने एवं अच्छे-अच्छे पकवानों का आनन्द लेने के लिए एक-दूसरे के यहाँ जाते हैं। कुछ समय के लिए भेदभाव को भी भूल जाते हैं। इसका अर्थ यह है कि जब परमात्मा हमें ज्ञान की होली में रंगते हैं, तब मनुष्यात्माओं को आत्मज्ञान प्राप्त होता है। केवल शरीर रूप से हम अनेक धर्म और जाति में बंटे हैं परन्तु आत्मिक रूप में हम सभी भाई-भाई हैं, एक परमात्मा शिव की संतान है। यह स्मृति होने के कारण हम स्वयं को आत्मा समझने लगते हैं और शारीरिक भेदभाव को भूलकर आत्मिक रूप से गले मिलते हैं। परमात्मा शिव द्वारा दिए हुए आध्यात्मिक ज्ञान से रंगे हुए मनुष्यात्माओं से सर्व संसार से भेदभाव तथा नफरत की आंधी और सामाजिक विकृतियों का नाश हो जाता है और मनुष्य देवात्मा तुल्य हो जाती है और फिर एक नये युग की शुरूआत होती है। तो आइये, हम केवल स्थूल रंग में नहीं बल्कि आध्यात्मिक और ज्ञान के रंग में रंगें तथा आने वाली खुशहाली दुनिया में जाने के अधिकारी बनें।

ओम शान्ति